Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-10| October - 2025

Original Article

भारतीय शिक्षा की आवश्यकता, स्वरूप और समाधान

डॉ.विजय कुमार

सामाजिक विज्ञान संकाय इतिहास ललित ना.मिथिला वि.का., दरभंगा

Email: vijaykr1882@gmail.com

Manuscript ID:
JRD -2025-171039
ISSN: 2230-9578
Volume 17
Issue 10
Pp. 184-187
October. 2025
Submitted: 20 Sept. 2025
Revised: 30 Sept. 2025
Accepted: 15 Oct. 2025
Published: 31 Oct. 2025

सारांश

शिक्षा के चरम उद्देश्य सत्यं शिव सुन्दर को साकार करने वाली यह भूमि भारत वर्ष आज अपने संक्रमण काल से गुजरते हुए समूचे विश्व को साथ लेकर चलने को तैयार है। शिक्षा मानव जीवन की एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य ने होमोसेपियन्स से मानव और फिर महामानव तक का सफर तय किया है। इतिहास के विश्व की अलग—अलग सम्यताओं ने अपनी संस्कृति और विरासत को सुरक्षित करने के लिए शिक्षा का ही रास्ता अपनाया है। मनुष्य को ज्ञानपूर्ण, प्रेमपूण व कुशलता पूर्ण जीवन जीने के लिए तैयार करना। भारतीय व पश्चिमी शिक्षा दार्शनिकों के बीच एक बड़ा अंतर यह है कि प्राचीन भारतीय विचारकों ने मनुष्य को नैसगिंक रूप से ज्ञानवान, प्रेमीभावी व कुशल माना था एवं उसके अनुसार गुरूकलों में वातावरण निर्मित की गयी थी। आधुनिक पश्चिमी शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने मनुष्य को पशुओं के समान प्रशिक्षित कर के उसे शिक्षित करने की आवश्यकता महसूस की१ है। पावलव, स्किनर, थार्नडाइक आदि मनोवैज्ञानिको के चूहे, कत्ते, गोरिल्ले आदि पर किये गए प्रयोग आज भी शिक्षण तकनीकों का आधार बने हुए है।

मूल शब्द : *भारतीय शिक्षा की आवश्यकता, उद्देश्य, महत्व, अवधारण, उपादेयता।*

भूमिका

भारतीय शिक्षा का ऐतिहासिक एवं आधुनिक पक्ष के साथ परिवर्तन—भारतीय शिक्षा व शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप में इतिहास में कई बार परिवर्तन हुए हैं। अलग—अलग कालों में उस काल के राजनैतिक व सामाजिक सांस्कृतिक स्थिति के हिसाब से शिक्षा व शिक्षा व्यवस्था बदलती चली गई। कभी राजनैतिक शक्तियों ने तो कभी धार्मिक व सामाजिक शक्तियों ने अपनी सत्ता को ध्यान में रखते हुए शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप का निर्माण किया। जहाँ उत्तर पाषाण काल व सिंधु सभ्यता में शिक्षा जीविकोपार्जन व पारिवारिक उद्देश्य की पूर्ति का साधन थी, वैदिक काल व स्मृतियों के युग आते आते यही शिक्षा धर्म का रक्षण व पोषण करते हुए साध्य बन चुकी थी। वैदिक कालीन गुरूकुलों में दीक्षा, तप, जप, कठोर अनुशासन आदि के द्वारा शिक्षा के कई उद्देष्यों जैसे चरित्र व व्यक्तित्व विकास, धर्म का अनुसरण, संस्कृति का रक्षण व विकास एवं सामाजिक एकता आदि को साधा जाता था।[२]

भारत में मौर्य वंश, गुप्त वंश और अन्य राजाओं के काल में शिक्षालय आर्श्यजनक रूप से कला स्थापत्य व विज्ञान के केंद्र बने थे। इस समय में विभिन्न धर्मों के उपाध्यायों व गुरूकुलों की सक्रियता थी। नालंदा, तक्षशिला और विक्रमशिला विश्वविद्यालयों की कीर्ति पूरे विश्व में थी। धर्म, कला, विज्ञान, व दर्शन की शिक्षा हमारी संस्कृति का अंग बना चुकी थी। उसके बाद सल्तनत काल व मुगल काल संस्कृतियों के मिश्रण के गवाह बने। पाली, प्राकृत आदि प्राच्य भाशाओं के साथ अरबी, फारसी आदि भाषाएँ भी प्रचलित हुई। विभिन्न कलाओं जैसे चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत व स्थापत्य की विदेशी शैलियों ने देशी शैलियों के साथ मिश्रण करके नए आयाम खोले। पूरे उत्तर भारत व दक्षिण भारत में अगणित पाठशालाएं, महाविद्यालय, मदरसे, गुरूकुल आदि अध्ययन केंद्र स्थापित हो चुके थे। शिक्षा अभी भी अपने क्षेत्र, समाज व धर्म से जुड़ी हुई थी।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.

Address for correspondence:
डॉ.विजय कुमार, सामाजिक विज्ञान संकाय इतिहास ललित ना.मिथिला वि.का., दरभंगा

How to cite this article:
कुमार, . विजय . (2025). भारतीय शिक्षा की आवश्यकता, स्वरूप और समाधान. Journal of Research and Development, 17(10), 184–187. https://doi.org/10.5281/zenodo.17646634

Quick Response Code:
Website: https://jrdrvb.org/
DOI: 10.5281/zenodo.17646634
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-10| October - 2025

औपनिवेशिक काल में यूरोपीय शक्तियों के पूरे विश्व को गुलाम बनाने के स्वप्न से भारतीय शिक्षा के परिदृश्य में बड़े परिवर्तन आये। अन्य उपनिवेदशों की तरह ही भारत के राजकाज को चलने लिए अंग्रेजों को नौकरशाही की आवश्यकता थी और इसके लिए बड़े पैमाने पर कर्मचारियों को तैयार किये जाने की जरूरत थी। इस आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए विद्यालयों को ऐसे कुशल कर्मचारियों के उत्पादन केन्द्रों की तहस काम में लिया जाने लगा। शिक्षा का सम्बन्ध नौकरशाही से हो गया। प्रशासन, न्याय, वाणिज्य, राजस्व आदि विभागों के पहलु पाठयक्रम के अंग बने। मैकाले, कर्जन, बुड, हंटर आदि के विचार व विवरण पढ़ने से हमें उनके उद्देश्य समझ आते है। इस तरह उद्देश्य बदलते गए, साँचे ढलते गए। शिक्षा किसी न किसी रूप में पनपती रही।[३]

अंग्रेजों ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था के ढ़ांचे को इस प्रकार से ढाल दिया कि वह नौकरशाही की शाखा के रूप में काम करने लगी और नौकरशाही, जो पहले अंग्रेजों को स्थापित रखने के काम आती थी, आजादी के बाद अब वह लोकतंत्र का अनिवार्य अंग बन गयी थी। आजाद भारत के संविधान निर्माताओं व स्वप्नदृष्टाओं ने भारत के सामने बहुआयामी लक्ष्य रखे। जहाँ एक ओर भारत को सामरिक प्रशासनिक तौर पर संभलना था, वहीं दूसरी ओर समाजवाद और पंथनिरपेक्ष जैसे आदर्शों को भी निभाता था। इस स्थिति में शिक्षा को जल्दबाजी में समष्टि मूलक तथ्य बना दिया गया जो अन्य सरकारी विभागों की तरह समाज में शांति, व्यवस्था एवं विकास बनाये रखने को साधन मात्र था। वे ही उद्देश्य जो भारतीय समाज के सामने थे, शिक्षा नीति के आगे भी रख दिए गए। ऐसे उद्देश्य जो मापे नहीं जा सकते। परिणामस्वरूप न तो स्कूली पद्धति में बदलाव का आवश्यकता महसूस की गयी ना ही पाठयक्रम, शिक्षणविधियों व गुरू—शिष्य संबंधों पर मौलिकता से विचार हुआ।[४]

शिक्षा के धुंधले उद्देश्य, उधार की शिक्षण विधियों, बेतुके पाठयक्रम और चरमराते पुराने स्कूलों से आजाद भारत की नयी पीढ़ी शिक्षित होने को विवश हुई। उसके पश्चात एक के बाद एक उच्च शिक्षा के लिए राधाकृष्णन समिति, माध्यमिक शिक्षा के लिए मुदालियर आयोग, विद्यालयी शिक्षा के लिए कोठारी आयोग व साथ ही राष्ट्रीय शिक्षा नीतियां १९८६, १९९२, २००५ आदि कई सारे प्रयास हुए परन्तु १०+२+३ व उच्चा शिक्षा मात्र डिग्री व नौकरी प्रदाता ही बनी रही।

वर्तमान स्वरूप की समस्याएं :

सन् १९४७ के बाद भारत में आश्जचर्नयक रूप से वैज्ञानिकों ने जन्म लेना बंद कर दिया। आजाद भारत के कई संभावित वैज्ञानिक और ना सिर्फ वैज्ञानिक बल्कि गणितज्ञ, खगोलविद, संगीतज्ञ, चित्रकार, मूर्तिकार, हस्तशिल्पज्ञ, खिलाडी, दार्शनिक, साहित्यकार, कवि, अर्थशास्त्री व राजनीतिज्ञों आदि संभावित महापुरूषों की प्रतिभाएं स्कूलों की व्यवस्था के नीचे दबकर खत्म को गयी। सरकारों ने आंकड़ों से प्यार किया और शिक्षा में गुणात्मक सुधारों को अपनाने की बजाय साक्षरता के आंकड़ों को प्राथतिकता माना गया। मात्रात्मक वृद्धि को उपलब्धि समझ लिया गया। पाठयक्रमों कीऐसी दुर्दशा हो गयी कि १५—२० साल में स्कूल—कॉलेज से निकलने वाला भारतीय विद्यार्थी सब कुछ पढ़ लेता है, परीक्षा दे लेता है, अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हो जाता है पर आत्मसात कुछ भी नहीं कर पाता।

ऊपरी तौर पर तीन आयामों में कमियां दिखती हैं :

पहली व्यवस्थागत कमी :—

हमारी शिक्षा नीति के निर्माताओं ने शिक्षा की सफलता को व्यक्तिगत ना रखकर सामूहिक कर दिया गया। उदाहरण के लिए एक कक्षा में ५० बच्चे हैं, सभी का मानसिक, शारीरिक, पारिवारिक स्तर अलग—अलग है फिर सभी को एक ही पाठयक्रम, एक ही कक्षा, एक ही समय में परीक्षा व एक ही तरह से मूल्यांकन क्यों? इस तरीके से किसी का सही विकास व मूल्यांकन नहीं जो पाता है। और अंत में हमारी शिक्षा नीति ही फेल हो जाती है। कक्षा ६—१२ तक गणित, सामाजिक, विज्ञान आदि विषयों की पाठयपुस्तकों में ऐसे बिंदु भी हैं जो इन विषयों में स्नातकोत्तर होने के समय फिर पढ़ाये जाते हैं। ये विसंगति नहीं हो और क्या है?

उच्च शिक्षा में फैशन की तरह डिग्री :

डिप्लोमा नए आते जाते हैं और पुराने पड़ते जाते हैं। ठण्ण्ए ठण्ैब्ण्ए ठण्ब्डण्ए इंजीनियरिंग, नर्सिंग के अलावा ठण्ठण्ए डण्ठण्ए ठण्ज्मबीण्ए डण्ज्मबीण्ए यहाँ तक कि ड्ए बैए डठठै और चीण्क करने वालो की तादाद इतनी है फिर भी हमें योग्य सैनिक, योग्य भाशाविद, योग्य राजनेता, योग्य अर्थशास्त्री, योग्य चिकित्सक या योग्य नागरिकों तक की कम खलती है। दूसरी बड़ी खमी ये देखने को मिलती है कि बच्चों को हम सही ढंग से शिक्षण सेवा उपलब्ध नहीं करा पा रहे हैं। ये केवल स्कूलों की संख्या की ही नहीं बल्कि स्कूलों की गुणवत्ता का भी प्रश्न है। बच्चे चाहे अमीर परिवार के हों, चाहे गरीब परिवार के। चाहे गांव के हो, चाहे शहर के हो। चाहे किसी जाति, धर्म, क्षेत्र के हो। मनोवैज्ञानिक स्तर पर पढ़ने के प्रति सबका रवैया एक जैसा होता है। दुःख की बात है कि बहुत कम या न के बराबर बच्चे भारत में रूचिपूर्ण शिक्षा प्राप्त कर पाते हैं। हम उनके लिए वो वातावरण उपलब्ध नहीं करा पाते जो उन्हें विकसित करने में सहायता करें। उन्हें मात्र नामंकित कर देने से, पांचवी पास कर देने से मुक्त पुस्तके,गणवेश, लैपटॉप आदि दे देने से उनके मन पर हम क्या असर करना चाहते हैं? और अब एक तीसरी व अति भयंकर भूल जो अंग्रेजों के काल में उनकी उपलब्धि थी और हमारे लिए गुलाम बनने व बनाने की मशीन इसे ठण्म्ण्कण कहा जाता है। शिक्षक प्रशिक्षण के नाम पर धड़ल्ले से डिग्रीयां बेची जाती हैं वो तो अपराध हैं ही। साथ ही पूरे शिक्षक प्रशिक्षण पाठयक्रम को तल्लीनता से पूरा कर एक मशीन बन जाना भी एक नैतिक अपराध ही है इस स्तर पर दो तरफा गड़बड़ी चल रही है। अव्वल तो शिक्षक प्रशिक्षण की जटिल मशीनी प्रक्रिया का अनुसरण देश के हजारों ठण्म्कण कॉलेज करते नहीं हैं। ठण्म्कण की डिग्रीयां बांटी जाती है।[५] और

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-10| October - 2025

लाखों फर्जी शिक्षकों की फौज करोड़ों विद्यार्थियों के भविष्य के साथ सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में खेलने लगती हैं। और अगर इस शिक्षक प्रशिक्षण की प्रक्रिया आत्मसात कर भी ली जाए तो इंसान शिक्षक बनने की बजाय पाठयक्रम पूरा करवाने वाली संवेदना हीन मशीन बन कर रह जाता है जिसका बच्चों के व्यक्तित्व, चारित्रिक व सर्वागीण विकास से कोई लेना देना नहीं है। उसे तो बस समय पर कोर्स पूरा करवाने, गृहकार्य, परीक्षा आदि करवाने की फिक्र रहती है। हमज ब शिक्षकों को निर्माण ही नहीं कर पर रहे हैं तो शिष्यों का निर्माण कैसे करेंगे? विश्व परिदृश्य में शिक्षा इन सब में इतर वैश्विक शिक्षा के स्थिति को देखे तो उपनिवेश काल के बाद सभी देशों ने अपनी अलग अलग राह चुनी। कई उत्पादन की राह पर आगे बढ़े, कई वितरण के बाजार बने तो कई अब भी आपसी संघर्ष में लगे रहे। चीन, अमेरिका, अफगानिस्तान, जापान, सिंगापुर आदि देशों की अलग अलग राष्ट्रीय दिशांए वे स्थिति देखने को मिलती हैं। इनकी दिशाओं से इन देशों में शिक्षा के स्तर व शिक्षा का इनके समाज में योगदान का प्रतिशत तय होता है। जीवन के लिए कठिन एवं अविकसित अफ्रीकी देश व अफगानिस्तान—इराक जैसे देशों में शिक्षा में साक्षरता के स्तर पर ही संकट है वही अमेरिका की एक संस्था ज्ञप्च्च (नॉलेज इज पॉवर) हयुस्टन स्कूल द्वारा कई विद्यालयों को जोड़कर चलाये जा रहे है कार्यक्रम में बालकों में गुणात्मक विकास पर काम किया जाता है महान शिक्षक तैयार किये जाते है शिष्यों में धैर्य, दया, शील, आत्मविश्वास जैसे गुण परीक्षा व पाठयक्रम के माध्यम से सिखाये हैं और इन्हें मापा जाता है। जापान, इंडोनेशिया और सिंगापुर आदि देशों में देशभक्ति व ईमानदारी जैसे चारित्रिक गुण बाकायदा सिलेबस में पढ़ाये—सिखाये जाते हैं। विकसित देशों में शिक्षा सूचनात्मकता से गुणमूलकता की ओर बढ़ रही है, भारत स्वयं को इस विश्व में कहाँ पाता है ये सोचने का विषय है। तीसरी है मनुष्य के हाथ की बनावट। ये वह अंग है जिसे मनुष्य की प्रथम मशीन कहा जा सकता है। सभ्यताओं के विशाल संसार इसी हाथ की बनावट एवं अंगूठे की विशिष्ठ स्थिति के कारण बन पाये। इससे मनुष्य कुशल बना, औजार बनाये और अपना जीवन स्तर ऊँचा उठाया। और वास्तव में इन तीनों यानी मस्तिष्क सदभावना व कुशलता का अधिकाधिक विकास ही मनुष्य को पशुत्व से देवत्व की ओर ले जाता है और ये ही शिक्षा का उद्देश्य भी है। इस शिक्षा दर्शन का धरातल पर उतारने में आज की परिस्थितियों को देखते हुए कठिनाए आ सकती है पर सुधारों की शुरूआत किसी ने किसी पीढ़ी को तो करनी ही सत्य है।[६]

वैदिक शिक्षा प्रणाली :—

वैदिक शिक्षा—प्रणाली की खास विशेषता थी "गुरूकुल" (शाब्दिक अर्थ 'शिक्षक का घर') की प्रणाली, छात्रों को शिक्षा के पूरे काल के लिए शिक्षक और उनके परिवार के साथ रहना आवश्यक था, कुछ गुरूकुल एकांत वन—क्षेत्रों में होते थे, लेकिन सिद्धांत एक ही था विद्यार्थियों के गुरू (शिक्षक)/गुरू और उनके परिवार के साथ रहना होता था यह प्रणाली लगभग २५०० वर्षों तक यथावत चलती रही पाठशालाओं तथा शिक्षक संस्थाओं का विकास बहुत बाद में हुआ।[७]

कार्य—क्षमता और नागरिक जिम्मेदारी का विकास :—

शिक्षा को गृहस्थ जीवन की भूमिका माना जाता था गृहस्य के अतिरिक्त सभी अन्य आश्रमों वाले व्यक्ति अपनी भौतिक आवश्यकताओं के लिए गृहस्थ पर निर्भर होते थे, इस तरह गृहस्थ न केवल अपने परिवार बल्कि अन्य वर्णों का भी पालन करता था गुरू शिक्षार्थी को समाज में अपनी यह भूमिका निभाने में सक्षम बनाया था इसके अतिरिक्त समाज को चलाने के लिए आवश्यक राजसेवक, न्यायाधीश, व्यापारी, पुरोहित तथा अन्य कुशल व्यक्ति गुरूकुलों द्वारा ही तैयार किये जाते थे।[८]

शिक्षक :

जब लिखित पुस्तकें नहीं थीं तो गुरू ज्ञान का एक मात्र स्रोत था इसलिए प्राचीन ग्रंथों में गुरू की बड़ी महिमा बताई गई है आगे अथर्वेद के ब्रह्मचर्य सूक्त का उल्लेख किया गया है जिसके अनुसार गुरू शिष्य को नया जन्म देता है विद्यार्थी के लिए गुरू जी की आज्ञा मानना हर स्थिति में अनिवार्य था परन्तु गुरू को यह महत्व अर्जित करना पड़ता था गुरू को पाठयक्रम में निष्णात होना होता था। इसके लिए उसे स्वयं सतत अध्ययन और मनन करना पड़ता था। गोपथ ब्राह्मण में एक कथा है कि एक गुरू शास्त्रर्थ हार गए, उन्होंने तत्काल शिक्षण कार्य बंद कर दिया और तभी पुनः आरम्भ किया जब वह अपने प्रतिद्वंद्वी जितने ही निष्णात हो गए इससे पता चलता है कि शिक्षक को अपनी योग्यता बढाने के लिए सदा प्रयत्यशील रहना पड़ता था, उनमें उच्च और आदर्श आचरण की आशा की जाती थी।[९]

शिक्षण विधि :—

प्रातिशाख्य (वेदांग शिक्षा' से सम्बंधित ग्रन्थ) ग्रंथों में वैदिक शिक्षा पद्धति का विवरण मिलता है, प्रत्येक छात्र को व्यक्तिगत रूप से पढ़ाया जाता था, अर्थात गुरू एक बार में एक छात्र को पढ़ाया था छात्र को एक दिन में दो या तीन वैदिक ऋचाएं याद करनी होती थी, छात्र को गुरू के निर्देश के अनुसार शब्दों का सही उच्चारण करना होता था और ऋचाओं को ठीक उसी ढंग से बोलना या गाना होता था जो परम्परा से चला आता था अध्यापन मौखिक था लिपि का विकास होने के बाद भी वैदिक मन्त्रों का मौखिक अध्यापन जारी रहा क्योंकि उच्चारण और गायन की मूल परम्परा को मौखिक रूप में ही पूरी तरह सुरक्षित रखा जा सकता था। याद करके सीखने का तरीका केवल वैदिक संहिताओं के लिए प्रयोग होता था अन्य विषयों को पढ़ाने के लिए व्याख्यान, होता था अन्य विषयों को पढ़ाने के लिए व्याख्यान, प्रश्नोत्तर शास्त्रार्थ इत्यादि का सहारा लिया जाता था छात्रों की संख्या कम होती थी ताकि गुरू प्रत्येक छात्र पर पर्याप्त ध्यान दे सके, अल्तेकर ने अनुमान किया है कि एक गुरू के पास बीस से अधिक छात्र नहीं होते होंगे।[१०]

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-10| October - 2025

निष्कर्ष :

भारतीय शिक्षा व शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप में इतिहास में कई बार परिवर्तन हुए है। अलग—अलग कालों में उस काल के राजनैतिक व सामाजिक संस्कृतिक स्थिति के हिसाब से शिक्षा व शिक्षा व्यवस्था बदलती चली गई। यदि भारतीय शिक्षा की ऐतिहासिक व वर्तमान भूले दूर करके वैस्विक नवाचारों को ध्यान में रखा जाए और शिक्षा नीति में व्यष्टि परक तत्व समावेशित किये जाएँ तो "सत्यं शिव सुदरम" की जा सकती है। आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में आ रही समस्याओं का निदान किया जा सकता है। भारत वर्ष में आज की शिक्षा की निराशाजनक स्थिति एवं बड़ी खामियों को रेखांकित करना। शिक्षा के घुंधले उद्येश्य, उधार की शिक्षण विवियां बेतुके पाठयक्रम और चरमराते पुराने स्कूलों से आजाद भारत की नयी पीढ़ी शिक्षित होने को विवश हुई।

संदर्भ सूची :

१. त्रिपाठी, कुसुम :— महिलाएँ दशा और दिशा, कुरूक्षेत्र, अंक, मार्च, २००७
२. महला, अरविन्द और सुरेन्द्र कटारिया, सं, भारत में महिला सशक्तीकरण : प्रयास और बाधाए, मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर, २०१३ प, २६२
३. दिनकर, रामधारी सिंह :— संस्कृतिक के चार अध्याय,
४. विमल, कुमार :— रामधारी सिंह दिनकर रचना संचयन
५. द्विवेदी, कपिलदेवी, वैदिक साहित्य एवं संस्कृति
६. गोयल, प्रीतिप्रभा, भारतीय संस्कृति
७. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, पृ, २५७—५८
८. कुमार, कमलेश, :— भारत की जनजाति महिलाएँ कुरूक्षेत्र, अंक, मार्च, २००७ पृ,२३
९. पाण्डेय, मैनेजर, भारतीय समाज में प्रतिरोध की परंपरा, नई दिल्ली, २०१३ पृ,९
१०. टॉमस, मूर, यूटोपिया